एकलव्य का प्रकाशन

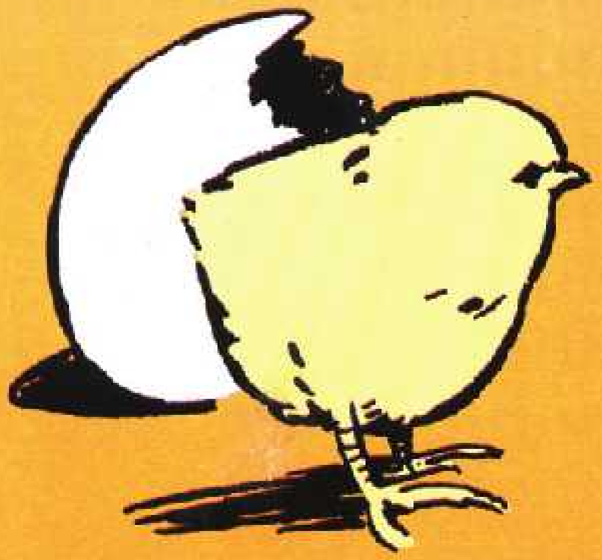

प्यारा कुनबा

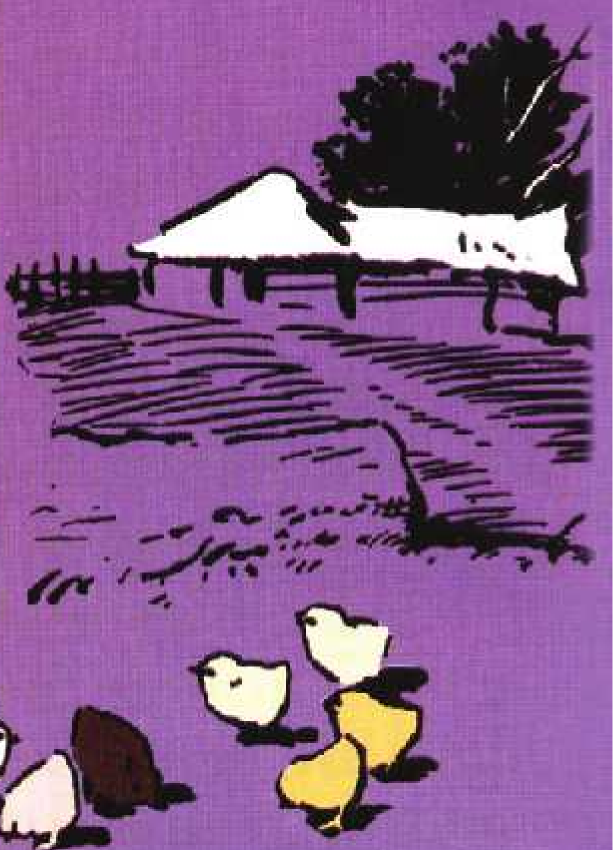

निकोलाई नोसोव

रूसी से अनुवाद : विजया उमराणीकर

प्यारा कुनबा

निकोलाई नोसोव
रूसी से अनुवाद : विजया उमराणीकर
चित्र : सौरभ दास

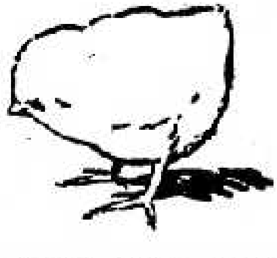

एकलव्य का प्रकाशन

प्यारा कुनबा

PYARA KUNBA

लेखकः निकोलाई नोसोव
रूसी से अनुवादः विजया उमराणीकर
चित्रांकनः सौरभ दास
पृष्ठ 5 व 8 के चित्रः विवेक वर्मा

सर रतन टाटा ट्रस्ट के वित्तीय सहयोग से विकसित।
संस्करणः जनवरी 2006/3000 प्रतियाँ
प्रथम पुनर्मुद्रण मई 2010/3000 प्रतियाँ
70 gsm मेपलिथो व 170 gsm आर्ट कार्ड कवर
ISBN: 978-81-87171-67-6
मूल्यः 40.00 रुपए

प्रकाशकः एकलव्य
ई-10, बीडीए कॉलोनी शंकर नगर,
शिवाजी नगर, भोपाल - 462 016 (म.प्र.)
फोनः (0755) 255 0976, 267 1017 फैक्सः (0755) 255 1108
www.eklavya.in
सम्पादकीयः books@eklavya.in
किताबें मँगवाने के लिएः pitara@eklavya.in

मुद्रकः आदर्श प्राइवेट लिमिटेड, भोपाल, फोनः (0755) 255 5442

घटना क्रम

बड़ा फैसला	5
अनचाही रोक	8
हमने रास्ता निकाल लिया	10
अगले दिन	13
शुरूआत	15
ताप गिरा	19
ताप बढ़ा	21
माया ने हाथ बँटाया	25
आफत!	29
पायोनियर सभा	31
मददगारों ने मदद की	36
आखिरी तैयारियाँ	40
सबसे कठिन दिन	42
अपराधी कौन?	46
आशा टूट जाने के बाद	50
हमारी गलती	54
जन्मदिन	58
देहात की ओर	63

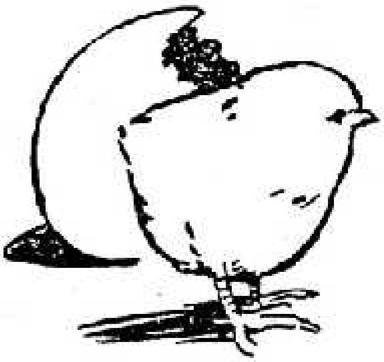

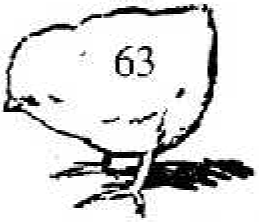

प्यारा कुनबा

बड़ा फैसला

यह घटना उसी दिन की है। मीश्का और मैं टीन के डिब्बे से भाप का इंजन बना रहे थे कि वह बीच ही में फट गया। मीश्का ने डिब्बे में पानी को बहुत ज़्यादा गरम कर दिया था, जिससे डिब्बा फट गया और भाप से मीश्का का हाथ जल गया। खैर, उसकी माँ ने फौरन उस पर नैफ्था का मलहम लगा दिया। यह बड़ी रामबाण दवा है। हाँ, मेरे कहने का यकीन न हो तो एक बार खुद लगाकर देख लीजिए। लेकिन ध्यान रखिए, मलहम जलते ही लगा लेना चाहिए। नहीं तो चमड़ी निकल आएगी।

भाप का इंजन फट जाने पर मीश्का की माँ ने हमें फिर उसके साथ नहीं खेलने दिया। इतना ही नहीं, बल्कि उसे कूड़े में फेंक दिया। कुछ दिन तो हम सोच ही नहीं पाए कि अब क्या किया जाए। यह समय बड़ी मुश्किल से कटा।

बसन्त का आरम्भ था। बर्फ हर जगह पिघल रही थी। गलियों में कलकल करते पानी के छोटे-छोटे नाले बह रहे थे। बसन्ती सूर्य की तेज़ रोशनी खिड़कियों से अन्दर आ रही थी। लेकिन मीश्का और मैं बिलकुल उदास थे। हम दोनों की अद्‌भुत जोड़ी है – कुछ काम किए बिना हमें चैन नहीं आता। जब हमारे पास कोई काम नहीं होता, हमारा मन नहीं लगता। हम किसी-न-किसी उधेड़बुन में पड़े रहते हैं और आखिर कुछ काम ढूँढ ही निकालते हैं।

एक दिन मैं मीश्का से मिलने गया और मैंने देखा कि वह मेज़ के पास, हाथों में सिर थामे कोई किताब पढ़ने में लीन है। पढ़ने में वह इतना मशगूल था कि उसको मेरे आने का भी पता न चला। मैंने दरवाज़े को फटाक से बन्द किया, तभी जाकर उसने सिर उठाया।

"ऐं, कौन, निकोलाद्ज़े?" उसने मुँह फाड़कर हँसते हुए कहा।

मीश्का मुझे मेरे असली नाम से कभी नहीं पुकारता। सब लोग मुझे कोल्या कहते हैं, लेकिन मीश्का इसकी बजाय मेरे लिए कोई-न-कोई विलक्षण नाम ढूँढ निकालता है, जैसे निकोला, मिकोला, मिकूला सेल्यानीनोविच या मिक्लूखो-माक्लाइ, और एक दिन तो उसने मुझे निकोलाकी तक कहा। हर दिन मुझे एक नया नाम

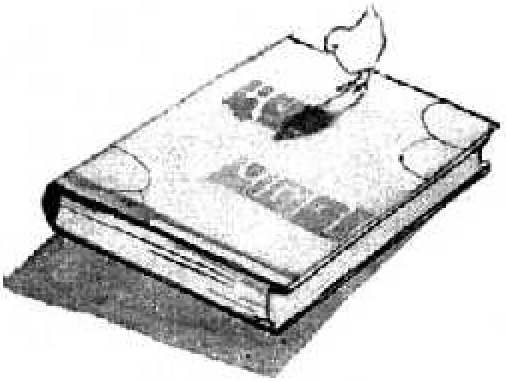

मिलता है। लेकिन अगर उसे यही पसन्द है, तो मैं बुरा क्यों मानूँ।

"हाँ", मैंने कहा। "मैं ही हूँ। कौन-सी पुस्तक पढ़ रहे हो?"

"बड़ी मज़ेदार किताब है," मीश्का बोला, "आज ही सबेरे अखबार की दुकान से खरीदी है।"

मैंने पुस्तक को देखा। नाम था *मुर्गी-पालन*। इसके हर पृष्ठ पर मुर्गों के पिंजरों की विविध आकृतियाँ तथा खाके थे।

"इसमें मजेदारी की क्या बात है?" मैंने पूछा। "मुझे तो यह कोई वैज्ञानिक पुस्तक जैसी लगती है।"

"हाँ, इसीलिए तो यह मजेदार है। यह कोई बेसिरपैर की परी-कथाओं की किताब नहीं है। इसकी हर बात सच है। यह बड़ी उपयोगी किताब है और यही इसकी विशेषता है।"

मीश्का ऐसा लड़का है जो हर बात की उपयोगिता पर ध्यान देता है। जब कभी उसके पास जेब खर्च की थोड़ी-सी भी रकम होती है, वह इस पुस्तक जैसी कोई उपयोगी वस्तु खरीद लेता है। एक बार उसने *प्रतिलोम त्रिकोणमितीय फलन तथा चेबिशेव के बहुपद* नामक पुस्तक खरीदी। अलबत्ता उसका एक शब्द भी उसके पल्ले नहीं पड़ा। इसलिए उसने यह फैसला किया कि वह उसे तभी पढ़ेगा जब वह खुद उसको समझने लायक हो जाए। तब से यह पुस्तक अलमारी में पड़ी-पड़ी मीश्का के लायक होने का इन्तज़ार कर रही है।

मीश्का ने पढ़े हुए पृष्ठ पर निशान लगाया और पुस्तक बन्द की।

"इस किताब से तुम कई बातें जान सकते हो," उसने कहा। "मुर्गी, बत्तख, हंस तथा टर्की, सभी के पालन-पोषण की पूरी जानकारी है इसमें।"

"तुम कहीं टर्की पालने की बात तो नहीं सोच रहे?"

"नहीं, फिर भी इस बारे में पढ़ना मुझे अच्छा लगता है। मुझे पता चल गया है कि हम इनक्युबेटर नामक यंत्र बना सकते हैं, जिसमें मुर्गी के बिना ही अण्डे सेये जा सकते हैं।"

"ऊँह!" मैंने कहा। "यह भी कोई बात है! सभी को यह मालूम है और मैं तो गए साल उसे देख भी चुका हूँ, जब मैं अपनी माँ के साथ सामूहिक फार्म गया था। वहाँ का इनक्युबेटर रोज़ अण्डों से पाँच-पाँच सौ, बल्कि हज़ार तक चूज़े पैदा कर देता था। इतनी तेजी के साथ कि उन्हें निकालने का वक्त भी नहीं मिलता था।"

"सच!" मीश्का ने उत्तेजित होकर पूछा। "मुझे नहीं मालूम था। मैं समझता था कि बस मुर्गियाँ ही अण्डे से सकती हैं। देहात में मैंने कितनी ही मुर्गियों को अण्डे सेते हुए देखा था।"

"अरे, मैंने भी ऐसी कई मुर्गियाँ देखी हैं," मैंने कहा। "हाँ, यह ठीक है कि इनक्युबेटर ज़्यादा अच्छा रहता है। मुर्गी ज़्यादा से ज़्यादा दर्जन भर अण्डे ही एक साथ से सकती है, लेकिन इनक्युबेटर में हज़ारों अण्डे एक साथ सेये जा सकते हैं।"

"मालूम है मुझे भी," मीश्का बोला। "यही तो पुस्तक में भी लिखा है। एक बात और है। मुर्गी जब तक अण्डों को सेती या बच्चों का पालन-पोषण करती रहती है, वह नए अण्डे नहीं देती। लेकिन अगर हमारे पास अण्डे सेने के लिए इनक्युबेटर हो, तो मुर्गी अण्डे देती ही चली जाती है।"

सेने की बजाय अगर मुर्गियाँ लगातार अण्डे ही देती रहीं तो कितने अधिक अण्डे मिल सकेंगे, हमने इसका हिसाब लगाना शुरू किया। अण्डों को सेने के लिए मुर्गी इक्कीस दिन लेती है। और बच्चे निकलने के बाद उनके पालने-पोसने में मुर्गी को कितना समय लगता है, यह देखो तो मालूम होगा कि कोई तीन महीने बाद ही वह फिर अण्डे देना शुरू करती है।

"तीन महीने, यानी नब्बे दिन," मीश्का ने कहा। "अगर अण्डे सेने में ही न लगी रहे तो हर साल वह नब्बे अण्डे अधिक दे सकेगी, भले ही वह एक ही अण्डा रोज़ क्यों न दे। इस हिसाब से दस मुर्गियों वाले छोटे-से फ़ार्म में भी साल में नौ सौ अण्डे ज़्यादा पैदा होंगे। और अगर हज़ारों मुर्गियों वाले किसी बड़े सामूहिक फ़ार्म या सरकारी फ़ार्म की सोचो, तो नब्बे हज़ार अधिक अण्डे हो जाएँगे। ज़रा सोचो तो! नब्बे हज़ार अण्डे!"

इनक्युबेटर की उपयोगिता पर हम काफ़ी समय तक चर्चा करते रहे।

इसके बाद मीश्का बोला, "भई सुनो, हम अपना एक छोटा-सा इनक्युबेटर क्यों न बनाएँ और कुछ अण्डे सेयें!"

"कैसे बना लें?" मैंने पूछा। "यह कोई इतनी आसान बात थोड़े ही है।"

"मुझे वह इतनी कठिन भी नहीं लगती," मीश्का बोला। "इस पुस्तक में सभी कुछ लिखा हुआ है। मुख्य बात यह है कि अण्डों को लगातार इक्कीस दिन गरम रखना चाहिए। उसके बाद चूज़े अपने आप बाहर निकल आएँगे।"

अपने खुद के चूज़े होने का विचार मुझे बड़ा अच्छा लगा। तरह-तरह के पक्षियों तथा प्राणियों का मैं बड़ा शौकीन हूँ। पिछले शरद में हम दोनों अपने स्कूल के प्रकृति-प्रेमी मण्डल में शामिल हुए थे। अपने प्रिय पालतू जानवरों के लिए हमने कुछ काम भी किया, लेकिन उसी समय मीश्का को भाप-इंजन बनाने की सूझी और हमने मण्डल में जाना बन्द कर दिया। मण्डल प्रमुख वीत्या स्मिर्नोवा ने हमें धमकाया कि अगर हमने कुछ काम नहीं किया तो वह हमारे नाम सदस्यों की सूची में से निकाल देगा। लेकिन हमने एक और अवसर देने के लिए उससे प्रार्थना की।

मीश्का कल्पना करने लगा कि जब अपने चूज़े निकल आएँगे, तब कितना मज़ा आएगा।

"कैसे नन्हे-नन्हे और प्यारे-प्यारे चूज़े होंगे वे!" वह बोला। "रसोई-घर का एक कोना हम उनके लिए अलग कर देंगे और वे वहीं रह सकते हैं। हम उनको खिलाएँगे और उनकी देखभाल करेंगे।"

"हाँ, लेकिन इससे पहले हमें काफ़ी कुछ करना होगा। यह मत भूलो कि अण्डों में से बाहर आने में उनको तीन सप्ताह लगेंगे।" मैंने कहा।

"तो क्या हुआ? हमें तो बस इनक्युबेटर तैयार करना है, चूज़े अपने आप निकल आएँगे।"

कुछ समय तक मैं इस बारे में सोचता रहा। मीश्का मेरी ओर उत्सुकता से देख रहा था। मैं समझ गया

कि वह काम को जल्दी-से-जल्दी शुरू करने के लिए उतावला है।

"ठीक है," मैंने कहा। "वैसे भी अभी हमारे पास कुछ और काम नहीं है। चलो, यही सही।"

"मैं जानता था कि तुम तैयार हो जाओगे!" मीश्का प्रसन्नता से चिल्लाया। "मैं इसे अकेले ही कर लेता, लेकिन तुम्हारे बिना उसमें आधा भी मज़ा नहीं आता।"

अनचाही रोक

"शायद हमारे लिए इनक्युबेटर बनाना ज़रूरी नहीं है। अण्डों को बस एक बर्तन में डालकर अँगीठी पर रख दिया जाए," मैंने प्रस्ताव रखा।

"अरे नहीं, इससे कुछ न होगा," मीश्का बोल उठा। "आग बुझ जाएगी और सारे अण्डे खराब हो जाएँगे। इनक्युबेटर की विशेषता यह है कि उसमें बराबर 39 डिग्री सेंटीग्रेड ताप रहता है।"

"39 डिग्री ही क्यों?"

"इसलिए कि जब मुर्गी अण्डे सेती है, तब उसका ताप यही होता है।"

"तो क्या इसका मतलब यह है कि मुर्गी को भी ताप होता है? मैं समझता था कि केवल आदमियों को ही बुखार आने पर ताप होता है।"

"अरे पागल, आदमी बीमार हो या चंगा, शरीर में ताप हमेशा ही रहता है। हाँ, जब उसे बुखार आता है, तब ताप बढ़ जाता है।"

इसके बाद पुस्तक खोलकर मीश्का ने एक चित्र की ओर संकेत किया।

"देखो, इनक्युबेटर ऐसा होता है। यह पानी की टंकी है, जिसमें से एक छोटी नली निकलकर अण्डे रखने की पेटी तक गई है। नीचे से टंकी को गरम किया जाता है। गरम पानी नली में बहता है और अण्डों को गर्मी पहुँचाता है। देखो, यहाँ तापमापी है, जिससे ताप देखा जा सकता है।"

"लेकिन हम टंकी कहाँ से लाएँगे?"

"हमें टंकी चाहिए ही नहीं। उसकी जगह हम टीन के खाली डिब्बे का उपयोग कर सकते हैं। हमें छोटा इनक्युबेटर ही तो बनाना है।"

"और हम उसे गरम कैसे करेंगे?" मैंने पूछा।

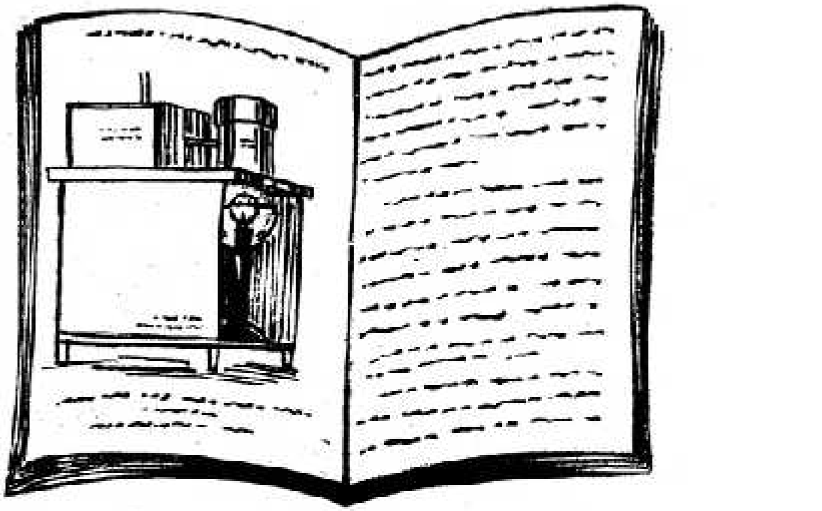

"मिट्टी के तेल के साधारण लैम्प से। हमारे कबाड़खाने में एक पुराना लैम्प कहीं पड़ा हुआ है।"

हम कबाड़खाने में गए। वहाँ एक कोने में बेकार चीजों का ढेर लगा हुआ था, जिसकी हम छानबीन करने लगे। वहाँ कितनी ही चीज़ें थीं – पुराने जूते, रबर के जूते, टूटा छाता, ताँबे की एक अच्छी नली। बोतलों और टीन के खाली डिब्बों की तो कोई गिनती ही नहीं थी। हमने करीब-करीब पूरा ढेर ही छान लिया, तब जाकर मेरी निगाह तख्ते पर रखे लैम्प पर गई। मीश्का ने चढ़कर उसे निकाल लिया। लैम्प धूल से भरा हुआ था, लेकिन चिमनी साबुत थी। और सबसे खुशी की बात यह थी कि लैम्प में बत्ती भी मौजूद थी। हमने लैम्प, ताँबे की नली तथा टीन के एक बड़े डिब्बे को उठाया और यह सब सामान रसोई-घर में ले आए।

सबसे पहले मीश्का ने लैम्प साफ किया, उसमें तेल डाला और उसे जलाकर देखा। लैम्प अच्छी तरह जलने लगा। बत्ती को ऊपर-नीचे करके लैम्प की लौ को इच्छानुसार छोटा-बड़ा किया जा सकता था। हमने लैम्प बुझाया और इनक्युबेटर बनाने के काम में लग गए। लगभग पन्द्रह अण्डे रखने लायक प्लाइवुड की एक बड़ी पेटी बनाई। अण्डों को ठीक तथा गरम रखने के लिए पेटी में रूई का अस्तर लगाया और उस पर नमदा चढ़ा दिया। फिर पेटी का ढक्कन तैयार किया और उसमें तापमापी के लिए एक छेद बनाया, ताकि हम ताप देख सकें। अब बस गर्मी देने का साधन लगाना भर रह गया था। हमने डिब्बे के ऊपर तथा नीचे एक-एक छेद कर दिया। ऊपर के छेद में नली को जोड़ दिया। इनक्युबेटर की पेटी के बाजू में एक छेद किया और नली को इस तरह घुमाकर अन्दर घुसा दिया कि उसका दूसरा सिरा फिर से बाहर आ गया। उसे हमने डिब्बे के तल में बनाए छेद से जोड़ दिया। इस मुड़ी-तुड़ी नली से पेटी के अन्दर एक तरह का रेडियेटर बन गया।

अब टीन के डिब्बे को गरमाने के लिए लैम्प रखना था। मीश्का लकड़ी का एक बक्सा ले आया। बक्से को हमने सीधा खड़ा किया, ऊपर की ओर एक गोल छेद किया और उसके ऊपर इनक्युबेटर को इस तरह रख दिया कि डिब्बा ठीक छेद पर बैठ गया। फिर नीचे से लैम्प सरका दिया।

आखिर सब तैयार हो गया। हमने टीन के डिब्बे को पानी से भरा और लैम्प जला दिया। डिब्बे और नली का पानी गरम होने लगा। तापमापी का पारा चढ़ने लगा और थोड़ी ही देर में वह 39 डिग्री तक पहुँच गया। ताप और भी बढ़ जाता, अगर मीश्का की माँ उसी समय अन्दर न आ जातीं।

"अब तुम दोनों को क्या सूझी है? सब जगह से मिट्टी के तेल की गन्ध आ रही है!" उन्होंने कहा।

"हम इनक्युबेटर बना रहे हैं," मीश्का ने कहा।

"कैसा इनक्युबेटर?"

"अरे, वही जिससे अण्डों में से चूज़े निकल आते हैं।"

"चूजे? क्या बक रहे हो?"

"देखो माँ, मैं तुम्हें दिखा ही देता हूँ। यहाँ अण्डों को रखा और यहाँ लैम्प..."

"भला, लैम्प किसलिए?"

"गर्मी देने के लिए। लैम्प का होना जरूरी है, वर्ना काम नहीं चलेगा।"

"बकवास है, मैं तुम्हें लैम्प को हाथ नहीं लगाने दूँगी। तुम उसको उलट दोगे और तेल में आग लग जाएगी। नहीं-नहीं, मैं यह नहीं होने दूँगी।"

"माँ, मेहरबानी करो, हम ध्यान रखेंगे।"

"न भई न, जलते हुए लैम्प के साथ मैं तुम्हें नहीं खेलने दूँगी। आखिर तुम चाहते क्या हो! पहले खौलते हुए पानी से हाथ जला लिया और अब घर जलाओगे!"

मीश्का ने ढेरों दलीलें दीं और खुशामदें कीं, लेकिन उसकी एक न चली।

मीश्का बेहद दुखी हो गया।

"मिट्टी में मिल गया हमारा इनक्युबेटर," वह बोला।

हमने रास्ता निकाल लिया

उस रात मैं काफी देर तक सो नहीं सका। पूरा एक घण्टा मैं इनक्युबेटर के बारे में ही सोचता रहा। पहले मैंने सोचा कि अपनी माँ से लैम्प माँग लूँ। लेकिन तुरन्त याद आया कि इससे कुछ न होगा। उन्हें वैसे ही आग से बहुत डर लगता है और वह हमेशा मझसे दियासलाई छिपाकर रखती हैं। इससे भी बुरी बात यह थी कि मीश्का की माँ ने लैम्प हमसे ले लिया था और वे किसी भी तरह उसे लौटाने को राजी नहीं थीं। घर में हर कोई गहरी नींद सो रहा था। एक मैं ही जागता हुआ अपने दिमाग को कुरेद रहा था।

और लो, यकायक मुझे एक ज़बरदस्त विचार सूझा – पानी गर्म करने के लिए बिजली के लैम्प का उपयोग क्यों न किया जाए?

मैं चुपके से उठा। मेज़ पर रखा लैम्प जलाया और उस पर उँगली रखकर देखने लगा कि वह गर्म होता है कि नहीं। वह तेजी से गर्म होने लगा। कुछ ही देर में इतना गर्म हो गया कि उस पर मैं उँगली नहीं रख सका। मैंने दीवार पर से तापमापी उतारकर लैम्प के ऊपर रखा। पारा उछलकर बिलकुल ऊपरी सिरे तक पहुँच गया। इसमें कोई शक नहीं कि लैम्प काफी गर्मी देता था।

प्रसन्न मन से मैंने तापमापी को उसकी जगह टाँग दिया और सो गया। अलबत्ता, उस रात के बाद तापमापी ने फिर कभी ठीक काम नहीं किया। इसका पता हमें कुछ देर बाद में चला। कमरे में ठण्ड होती, तापमापी को देखो, पारा शून्य के ऊपर 40 डिग्री! और कमरा जरा भी गर्म हुआ कि बस, पारा ठीक सिर पर जा चढ़ता और जब तक झटककर उसको नीचे न लाया जाता, वह वहीं जमा रहता। 30 डिग्री से कम ताप वह कभी भी न दिखाता। उसके हिसाब से तो ठेठ जाड़ों में भी हमें अँगीठी जलाने की जरूरत न पड़ती। लैम्प पर रखने के कारण वह मुझसे ही बिगड़ गया होगा।

दूसरे दिन मैंने मीश्का को अपना विचार बताया। हमने उसे तुरन्त ही आजमाने का फैसला किया। स्कूल से घर आते ही मैंने माँ से एक पुराना टेबल-लैम्प ले लिया। वह बरसों से अलमारी में पड़ा था। उसे मैंने बक्से में तेल के लैम्प की जगह रख दिया। मीश्का ने कुछ पुस्तकें लैम्प के नीचे रख दीं, जिससे वह पानी की टंकी के और पास आ गया। फिर मैंने लैम्प जला दिया। हमने तापमापी की ओर देखना शुरू किया। इसे मीश्का अपने घर से लाया था।

बहुत समय तक कुछ नहीं हुआ। पारा वहीं का वहीं बना रहा। हमें लग रहा था कि इस प्रयोग से कुछ भी हाथ नहीं आएगा। लेकिन कुछ समय बाद पानी गरम होने लगा और पारा भी ऊपर चढ़ने लगा।

आधे घण्टे में वह 39 डिग्री हो गया।

मीश्का खुशी से तालियाँ बजाकर चिल्ला पड़ा।

"वाह! अण्डे सेने के लिए बिलकुल यही ताप चाहिए! ठीक है, बिजली तेल का काम दे देगी!"

"इसमें क्या शक है!" मैंने कहा। "सच तो यह है कि बिजली तेल से बढ़कर है, क्योंकि तेल के लैम्प से आग लग जाने का खतरा रहता है। लेकिन बिजली के लैम्प में कोई खतरा नहीं होता।"

तभी हमने देखा कि पारा और भी चढ़ गया है और अब 40 डिग्री पर आ गया है।

"अरे!" मीश्का चिल्लाया। "देखो, वह और बढ़ गया है!"

"इसे किसी तरह रोकना होगा," मैं बोला।

"हाँ, लेकिन कैसे? अगर तेल का लैम्प होता, तो हम बत्ती नीची कर देते।"

"बिजली के लैम्प में बत्ती-वत्ती कुछ नहीं होती!"

"तुम्हारी बिजली बेकार है!" मीश्का ने नाराज़ होकर कहा।

मुझे भी गुस्सा आ गया, "मेरी बिजली? मेरी बिजली क्यों?"

"बिजली के लैम्प का विचार तुम्हारा ही था कि नहीं? पारे को देखो, 42 डिग्री हो गया है। अगर यह इसी तरह चढ़ता रहा, तो सभी अण्डे उबल जाएँगे और एक भी चूजा नहीं निकलेगा। इसमें सब कुछ ठीक रहना चाहिए।"

"रुको," मैंने कहा, "हम लैम्प को थोड़ा नीचे कर दें तो पानी इतनी जल्दी गर्म नहीं होगा और साथ-साथ ताप भी कम हो जाएगा।"

लैम्प के नीचे से हमने सबसे मोटी किताब हटा दी और नतीजे का इन्तजार करने लगे। पारा धीरे-धीरे नीचे सरकने लगा और 39 डिग्री तक आ गया। हमने राहत की साँस ली।

"अब सब कुछ ठीक है," मीश्का बोला। "हम अभी अण्डे सेना शुरू कर सकते हैं। मैं अपनी माँ से कुछ पैसे लूँगा। तुम भी अपनी माँ से ले लो। फिर हम दोनों मिलकर एक दर्जन अण्डे खरीद लेंगे।"

मैं दौड़कर अपनी माँ के पास गया और उनसे अण्डे खरीदने के लिए पैसे माँगने लगा। पहले माँ की समझ में ही नहीं आया कि मुझे अण्डे खरीदने की क्या जरूरत पड़ गई। आखिर मैंने उनको किसी तरह समझाया कि हमें अपने इनक्युबेटर के लिए अण्डों की जरूरत है।

"इससे कुछ नहीं होगा," माँ ने कहा। "मुर्गी के सेये बिना अण्डों से बच्चे निकालना आसान नहीं है। तुम लोग बेकार में समय खराब करोगे।"

लेकिन मैंने ज़िद पकड़ ली और आखिर उन्होंने पैसे दे ही दिए।

"ठीक है," माँ ने कहा। "लेकिन अण्डे कहाँ से खरीदोगे?"

"दुकान से," मैंने कहा। "और कहाँ से?"

"न, न" माँ ने कहा। "ऐसा नहीं करते। तुम्हारे पास ताजे अण्डे होने चाहिए, नहीं तो उनसे चूज़े नहीं निकलेंगे।"

मैं दौड़कर मीश्का के पास गया और उसको सब कुछ बताया।

"कैसा हूँ मैं!" मीश्का ने कहा। "किताब में भी यही लिखा हुआ है। मैं बिलकुल भूल गया था।"

हमने शहर के पास वाले गाँव जाने का निश्चय किया। गर्मियों में हम वहाँ रह चुके थे। हमारी मकान मालकिन नताशा मौसी मुर्गियाँ पालती थीं और वहाँ ताज़ा अण्डे मिल जाने का हमें पूरा विश्वास था।

अगले दिन

जिन्दगी भी कैसी अजीब है। कल तक कहीं जाने की बात हमने सपने में भी नहीं सोची थी, और आज ट्रेन में बैठकर नताशा मौसी के गाँव जा रहे थे। हम इन अण्डों को जल्दी-से-जल्दी प्राप्त करके सेना चाहते थे। और इधर, यह कमबख्त ट्रेन जैसे हमारा मजाक उड़ाती हुई रेंगती जा रही थी। हमें लगा कि यात्रा बहुत लम्बी है। यह हमेशा की ही बात है। जब कभी हमें जल्दी होती है, हर बात झूठ-मूठ ही धीरे-धीरे होती है। अलावा इसके, मुझे और मीश्का को यह फिक्र थी कि कहीं ऐसा न हो कि हमारे वहाँ पहुँचने पर नताशा मौसी न मिलें। फिर हम क्या करेंगे?

लेकिन सब ठीक रहा। नताशा मौसी घर पर ही थीं।

हमें देखकर वे बड़ी प्रसन्न हुईं। वे समझीं हम उनके साथ रहने आए हैं।

"हमें बड़ी खुशी होती, लेकिन हम अभी नहीं रह सकते," मीश्का ने कहा। "छुट्टियों से पहले हम ऐसा नहीं कर सकते।"

"हम काम से आए हैं," मैंने कहा। "हमें कुछ अण्डे चाहिए।"

"अण्डे! क्या बात है, शहर में आजकल अण्डे नहीं मिलते?" मौसी ने पूछा।

"नहीं, मिलते तो हैं," मीश्का बोला। "लेकिन हमें ताजे अण्डे चाहिए।"

"क्या दुकानों में ताजे अण्डे नहीं मिलते?"

"अण्डे मुर्गी के देते ही सीधे दुकान पर नहीं चले जाते, या चले जाते हैं?" मीश्का नें पूछा।

"हाँ, यह तो सच है, सीधे तो नहीं जाते।"

"हाँ, अब देखिए," मीश्का बोल उठा। "जब तक बहुत-से अण्डे नहीं हो जाते, वे इकट्ठा होते रहते हैं और उन्हें दुकान पर जाते-जाते तो शायद पूरा सप्ताह या दो सप्ताह भी लग जाते होंगे।"

"अच्छा, लेकिन इससे क्या?" नताशा मौसी बोलीं। "दो सप्ताह में अण्डे खराब तो नहीं होते।"

"ओह, यह बात है? लेकिन हमारी किताब में तो लिखा है कि दस दिन से ज्यादा पुराने अण्डों को सेना बेकार है।"

"क्या, अण्डे सेने हैं! तब तो बात दूसरी है," नताशा मौसी ने कहा। "इसके लिए सचमुच एकदम ताज़े अण्डे ही चाहिए। लेकिन जो अण्डे हम खाते हैं, वे एक या दो महीने तक भी खराब नहीं होते। तुम्हें क्या मुर्गियाँ पालनी हैं?"

"अरे हाँ, इसीलिए तो हम यहाँ आए हैं," मैंने कहा।

"लेकिन अण्डे सेओगे कैसे?" नताशा मौसी ने पूछा। "इसके लिए तो मुर्गी होना जरूरी है।"

"नहीं, हमें मुर्गी की जरूरत नहीं है। हमने इसके लिए एक इनक्युबेटर बना लिया है।"

"क्या, इनक्युबेटर! भई वाह! लेकिन मेरी समझ में नहीं आता कि इनक्युबेटर से तुम करोगे क्या?"

"हम चूज़े पैदा करना चाहते हैं।"

"किसलिए?"

"यूँ ही" मीश्का ने कहा। "चूज़ों के बिना मज़ा नहीं आता। देहात में रहने वाले आप लोगों के पास चूज़े, गायें, सुअर, हंस – सभी कुछ होता है। लेकिन हमारे पास कुछ भी नहीं होता।"

"ठीक है, लेकिन हम देहात में रहते हैं। शहर में गाय अच्छी तरह नहीं पाली जा सकती।"

"शायद गाय नहीं पाली जा सकती, लेकिन छोटा जानवर तो पाला ही जा सकता है।"

"न, शहर में यह नहीं हो सकता। बड़ी मुश्किल उठानी पड़ती है," नताशा मौसी ने कहा।

"हमारे यहाँ एक आदमी ने पंछी पाल रखे हैं," मीश्का बोला। "उसके पास कितने ही पिंजरे हैं, जिनमें तरह-तरह की चिड़ियाँ हैं।"

"हाँ, लेकिन पंछियों को तो वह पिंजरों में रखता है। अपने चूज़ों को तुम पिंजरों में थोड़े ही रखोगे?"

"नहीं हम उनको रसोई-घर में रखेंगे। आप चिन्ता न कीजिए, हम उनके लिए कोई अच्छी जगह निकाल लेंगे। बस, हमें खूब बढ़िया अण्डे दे दीजिए। बिलकुल ताजे, नहीं तो उनमें से चूज़े नहीं निकलेंगे।"

"बहुत अच्छा, ले लो," नताशा मौसी ने कहा। "मुझे मालूम है कि तुम्हें कैसे अण्डे चाहिए। मेरी मुर्गियों ने अभी-अभी अण्डे दिए हैं, इसलिए वे एकदम ताज़े ही होंगे।"

नताशा मौसी रसोई-घर में गईं और वहाँ से ले आईं पन्द्रह सुन्दर अण्डे, हरेक चिकना, सफेद और

बिलकुल साफ था। उनको देखकर सहज ही जान पड़ता था कि वे ताजे हैं। मौसी ने उनको हमारी टोकरी में रख दिया और एक ऊनी दुशाले से उनको ढँक दिया, ताकि रास्ते में वे ठण्डे न हो जाएँ।

"अच्छा, जाओ। खुश रहो। अपने काम में सफल हो," नताशा मौसी ने दरवाजे तक आकर हमें विदा करते हुए कहा।

अब बाहर अँधेरा फैलने लगा था। हम दोनों जल्दी-जल्दी स्टेशन की ओर बढ़े।

घर पहुँचने में हमें बहुत देरी हो गई और माँ ने मुझे खूब झिड़कियाँ दीं। मीश्का को भी उसकी माँ ने खूब झाड़ा। लेकिन हमें इससे जरा भी दुख न हुआ। दुख हुआ इस बात का कि रात में बहुत देर होने के कारण अण्डों को सेने का काम हमें दूसरे दिन के लिए रखना पड़ा।

शुरुआत

दूसरे दिन स्कूल से आते ही हमने इनक्युबेटर में अण्डे रख दिए। उनके लिए वहाँ काफी जगह थी। इतना ही नहीं, कुछ जगह खाली भी रह गई।

हमने इनक्युबेटर पर ढक्कन लगाया, तापमापी को ठीक जगह पर रख दिया और लैम्प का बटन दबाने ही वाले थे कि मीश्का बोला, "ठहरो, पहले जरा यह देख लें कि सब ठीक हुआ है या नहीं। शायद, इनक्युबेटर को गर्म करने के बाद अण्डों को अन्दर रखना होगा।"

"मैं इस बारे में कुछ नहीं जानता," मैंने कहा। "देखें, पुस्तक में क्या लिखा है।"

मीश्का ने पुस्तक उठाई और पढ़ने लगा। देर तक पढ़ने के बाद वह बोला, "देखा, हम उनका दम घोंटने जा रहे थे।"

"किनका?"

"अण्डों का। पता चला कि वे जानदार हैं।"

"जानदार हैं?" मैंने आश्चर्य से पूछा।

"हाँ, हाँ। देखो पुस्तक में क्या लिखा है। '...अण्डों में यद्यपि जीवन प्रत्यक्ष नहीं दिखाई देता, तो भी वे सजीव होते हैं। जीवन अभी अदृश्य होता है। लेकिन अण्डे को गर्मी मिलने से उसमें चेतना आ जाती है। धीरे-धीरे भ्रूण बच्चे का आकार लेने लगता है और अन्त में छोटा-सा बच्चा निकल आता है। सभी प्राणियों की तरह अण्डे भी साँस लेते हैं... ' समझे! अण्डे साँस लेते हैं – बिलकुल हमारी-तुम्हारी तरह।"

"बकवास!" मैंने कहा। "हम तो मुँह से साँस लेते हैं। भला, अण्डे किससे साँस लेते हैं?"

"धत्, हम मुँह से नहीं, फेफड़ों से साँस लेते हैं। हवा नाक-मुँह से होकर फेफड़ों में ही जाती है। अण्डों में खोल से होकर हवा जाती है और इस तरह वे साँस लेते हैं।"

"ठीक है, वे साँस लेना चाहते हैं, तो लें" मैंने कहा। "हम थोड़े ही उन्हें मना करते हैं।"

"लेकिन बन्द पेटी में वे कैसे साँस ले सकते हैं? सुनो, साँस लेते समय हम कार्बन डायऑक्साइड छोड़ते

हैं। अगर तुम्हें पेटी में बन्द करके रखा जाए, तो तुम ताज़ी हवा नहीं पा सकोगे। तुम कार्बन डायऑक्साइड छोड़ते जाओगे और आखिर में वह इतनी ज़्यादा हो जाएगी कि तुम्हारा दम घुट जाएगा।"

"मैं क्यों पेटी में बन्द होने लगा? मैं दम घुटकर मरना नहीं चाहता," मैंने कहा।

"बिलकुल ठीक, और यही बात अण्डों के बारे में भी है। लेकिन हमने तो उन्हें पेटी में बन्द किया है।"

"तो अब हमें क्या करना होगा?"

"पेटी में हवा के आने-जाने का प्रबन्ध करना होगा," मीश्का ने कहा। "सभी सचमुच के इनक्युबेटरों में हवा के आने-जाने का प्रबन्ध होता है।"

अण्डों में से एक भी टूट न जाए, इसकी सावधानी रखते हुए हमने उनको बक्से से निकालकर टोकरी में रख दिया। मीश्का एक बरमा लाया और उसने इनक्युबेटर में कई छोटे-छोटे छेद कर दिए, ताकि उनमें से होकर कार्बन डायऑक्साइड बाहर निकल जाए।

जब यह काम पूरा हो गया, तो हमने अण्डों को फिर पेटी में रखा और ढक्कन लगा दिया।

"सिर्फ एक मिनट," मीश्का बोला। "अब तक हमें यह नहीं मालूम हुआ है कि पहले क्या करना चाहिए – इनक्युबेटर को गरम करना या अण्डों को रखना।"

उसने फिर पुस्तक का सहारा लिया।

"हम अब भी गलती कर रहे हैं," कुछ देर बाद उसने कहा। "यहाँ लिखा हुआ है कि इनक्युबेटर के भीतर की हवा नम होनी चाहिए, क्योंकि अगर वह सूखी रही, तो अण्डे के अन्दर का तरल पदार्थ भाप बनकर खोल से उड़ जाएगा और भ्रूण नष्ट हो जाएगा। इसलिए इनक्युबेटर में पानी से भरे कटोरे रखने चाहिए। पानी की भाप बनती जाएगी और उससे हवा नम रहेगी।"

हमने अण्डों को फिर बाहर निकाला और पानी के गिलास अन्दर रखने लगे। पर वे इतने लम्बे थे कि ढक्कन लगाना असम्भव हो गया। हम किसी छोटे बर्तन की तलाश करने लगे, लेकिन हमें कुछ नहीं मिला। तभी मीश्का को याद आया कि उसकी छोटी बहन माया के खिलौनों में लकड़ी की कुछ कटोरियाँ हैं।

"हम माया की कुछ कटोरियाँ ले लें तो?" उसने कहा।

"वाह, क्या बात है!" मैंने कहा। "जाओ, ले आओ।"

मीश्का ने माया के खिलौने ढूँढकर, उनमें से लकड़ी की चार कटोरियाँ चुन लीं। वे आकार में बिलकुल ठीक निकलीं। हमने उनको पानी से भरकर इनक्युबेटर के भीतर, हर कोने में एक-एक करके रख दिया। लेकिन जब हम अण्डों को फिर से रखने लगे, तो देखा कि अब वहाँ सिर्फ बारह अण्डों की जगह थी। तीन अण्डे बाकी रह गए।

"कोई बात नहीं," मीश्का बोला। "बारह चूज़े भी काफी होंगे। ज़्यादा का हम क्या करेंगे? उनको खिलाने के लिए हमारे पास इतना दाना भी तो होना चाहिए।"

उसी समय माया अन्दर आई। जब उसने देखा कि उसकी कटोरियाँ इनक्युबेटर में हैं, तो वह चीखने-चिल्लाने लगी।

"सुनो," मैंने कहा। "हम इन्हें सदा के लिए तो ले नहीं रहे। आज से इक्कीस दिन बाद ये तुम्हें वापस मिल जाएँगी। तुम चाहो, तो उनके बदले हम तुम्हें तीन अण्डे अभी दे सकते हैं।"

"अण्डे लेकर मैं क्या करूँगी? वे तो खाली हैं!"

"नहीं, खाली नहीं हैं। उनमें ज़र्दी, सफेदी सभी कुछ तो है।"

"लेकिन उनमें चूज़े तो नहीं हैं, न!"

"देखो, जब अण्डों में से चूज़े निकल आएँगे, तो हम तुम्हें एक दे देंगे।"

"सच्ची-मुच्ची?"

"हाँ, सच्ची। लेकिन अब यहाँ से भाग जाओ और हमें परेशान न करो। हम वैसे ही मुश्किल में हैं कि शुरू कैसे करें। हमारी समझ में यह नहीं आ रहा कि अण्डे रखने के बाद इनक्युबेटर को गरम किया जाए या इनक्युबेटर को गरम करने के बाद अण्डे रखे जाएँ।"

मीश्का ने फिर पुस्तक देखी और जाना कि यह किसी भी तरह से किया जा सकता है।

"बहुत ठीक," मैं बोला। "चलो, बिजली का बटन दबाओ और काम शुरू करें।"

"मुझे जरा घबराहट हो रही है," मीश्का ने कहा। "लैम्प तुम जलाओ तो ज़्यादा ठीक रहेगा, क्योंकि मेरी किस्मत हमेशा खोटी रहती है।"

"तुम ऐसा क्यों सोचते हो?"

"बस, किस्मत ही खोटी है, और क्या। मेरा किया कोई काम कभी पूरा नहीं होता।"

"मेरी भी यही बात है," मैंने कहा। "मेरी किस्मत भी हमेशा खराब रहती है।"

अब हम दोनों को वे सभी बातें याद आने लगीं जो हमारे जीवन में घटी थीं। और आखिर यह सिद्ध हुआ कि हम दोनों बड़े अभागे रहे हैं।

"ऐसे काम को हम शुरू करें तो किसी का कोई फायदा नहीं होगा," मीश्का ने कहा। "वह हर हालत में बिगड़ जाएगा।"

"हम माया से करवा लें तो," मैंने कहा।

मीश्का ने अपनी बहन को अन्दर बुलाया।

"सुनो माया," मैंने कहा। "क्या तुम किस्मतवाली हो?"

"हाँ-हाँ!"

"तुम्हारा कभी कोई काम अधूरा रहा है?"

"नहीं, कभी नहीं।"

"बड़ी अच्छी बात है! देखो माया, पेटी में वह लैम्प है न?"

"हाँ।"

"ठीक, तुम जरा उसका बटन तो दबा दो।"

माया इनक्युबेटर के पास गई और उसने बटन दबा दिया।

"कुछ और?" उसने पूछा।

"कुछ नहीं," मीश्का बोला। "अब भाग जाओ और हमें तंग मत करो।"

माया नाराज़ होकर चली गई। हमने जल्दी-जल्दी ढक्कन लगाया और तापमापी को देखना शुरू किया। पहले पारा 18 डिग्री पर ही रुका रहा, लेकिन धीरे-धीरे वह बढ़ने लगा और 20 डिग्री तक पहुँच गया। इसके बाद जरा तेजी से बढ़कर वह 25 डिग्री तक चला गया, लेकिन 30 डिग्री होने पर वह फिर धीमी चाल से बढ़ने लगा। आधे घण्टे में वह 36 डिग्री तक चढ़ गया और फिर वहीं रुक गया। मैंने लैम्प के नीचे एक और पुस्तक रख दी। इससे पारा फिर चढ़ने लगा। वह 39 डिग्री तक चढ़ा और फिर चढ़ता ही चला गया।

"ठहरो!" मीश्का चिल्लाया। "देखो, वह 40 डिग्री हो गया है। यह किताब ज़्यादा मोटी है।"

मैंने किताब निकाल ली और उसके बदले एक पतली किताब रख दी। पारा नीचे आने लगा। वह 39 डिग्री तक आ गया, और फिर भी गिरता रहा।

"यह बहुत पतली है," मीश्का बोला। "ठहरो, मैं एक कॉपी ले आता हूँ।"

वह दौड़कर एक कॉपी लाया और उसे लैम्प के नीचे घुसा दिया। पारा फिर से चढ़ने लगा, 39 डिग्री तक गया और वहीं रुक गया। हमने तापमापी पर आँखें गड़ाए रखीं। पारा अचल था।

"वह रहा," मीश्का फुसफुसाया। "यही ताप हमें इक्कीस दिन तक लगातार कायम रखना है। क्या ख्याल है, हम रख लेंगे?"

"बेशक, रख सकते हैं," मैंने कहा।

"क्योंकि अगर हम नहीं रख सके, तो हमारा सारा काम बेकार हो जाएगा।"

"लेकिन हम ज़रूर रखेंगे। किसने कहा कि हम नहीं रख पाएँगे!"

सारा दिन हम इनक्युबेटर के पास बैठे रहे। हमने स्कूल का अभ्यास तक तापमापी पर नजर रखे-रखे ही किया। वह 39 डिग्री पर था।

"सब-कुछ ठीक चल रहा है," मीश्का ने सहर्ष कहा। "अगर हमने इसे कायम रखा तो ठीक इक्कीस दिन बाद हमें चूज़े मिल जाएँगे। ज़रा सोचो तो, बारह नन्हे-नन्हे रोएँदार चूज़े! कैसा प्यारा कुनबा होगा उनका!"

ताप गिरा

दूसरे लड़कों की बात तो पता नहीं, पर अपने को तो रविवार के दिन देर तक सोते रहना अच्छा लगता है। रविवार को न तो स्कूल होता है और न कहीं बाहर जाने की जल्दी। सप्ताह में एक दिन आदमी आराम से सो सकता है। और मुझसे पूछें, तो इसमें कोई बुराई भी नहीं है। अगला ही दिन रविवार था लेकिन न जाने क्यों मैं बहुत जल्दी जाग गया। सूरज अभी नहीं निकला था, फिर भी उजाला काफी था। मैं करवट बदलकर फिर सोने को था कि यकायक मुझे इनक्युबेटर की याद आई। मैं बिछौने से कूदा, जल्दी-जल्दी कपड़े पहने और दौड़ता हुआ मीश्का के घर पहुँचा। मीश्का ने खुद ही दरवाजा खोला।

"श्श—," वह फुसफुसाया। "तुम सबको जगा दोगे। भला, इतने तड़के यहाँ आने की क्या सूझी? और घण्टी तो इस तरह बजाई जैसे घर में आग लग गई हो!"

वह रात के कपड़े पहने हुए था और उसके पैर नंगे थे।

"लेकिन तुम तो जाग गए हो न?" मैंने पूछा।

"जाग गया हूँ!" मीश्का गुर्राया। "अजी जनाब, अब तक तो सोया ही नहीं।"

"क्यों?"

"इस कमबख्त इनक्युबेटर के कारण।"

"क्यों, आखिर हुआ क्या?"

"गिरता रहता है।"

"लेकिन क्यों? कल तो खूब जमा खड़ा था।"

"अरे इनक्युबेटर नहीं, पागल! मेरा मतलब ताप से है।"

"लेकिन क्यों?"

"यही तो मैं जानना चाहता हूँ। जब मैं सोने गया, तब सब कुछ ठीक था, लेकिन अपने चूज़ों के बारे में सोचता-सोचता मैं बहुत देर तक नहीं सो सका। थोड़ी देर बाद इनक्युबेटर का हाल देखने उठा। रसोई-घर में दौड़ता हुआ गया और देखा – पारा 38.5 डिग्री तक गिर आया है! लैम्प के नीचे मैंने एक और पुस्तक ठूँस दी और ताप के 39 डिग्री होने तक इन्तजार करता रहा। अच्छा हुआ कि मैं सोया नहीं था, वरना अपने चूज़ों का तो खात्मा ही हो जाता।

इसके बाद, फिर से सो जाने की बजाय मैंने कुछ देर और इन्तज़ार करके देखते रहने का फैसला किया। एक घण्टा गुजर गया, दो घण्टे बीत गए और ताप वही रहा। सिर्फ बैठे रहने से मैं ऊब गया था। इसलिए मैंने एक किताब पढ़ना शुरू कर दिया। मैं उसमें इतना रम गया कि तापमापी को बिलकुल भूल ही गया। और जब उस पर निगाह डाली तो ताप फिर 38.5 डिग्री था। वह आधा डिग्री और गिर गया था। मैंने एक और कॉपी उसके नीचे रख दी। ताप फिर ठीक हो गया। देखो, इस वक्त वह अचल है, लेकिन कहा नहीं जा सकता कि बाद में क्या होगा!"

"अच्छा, अब तुम जाकर सो जाओ," मैंने कहा। "मैं कुछ देर यहीं रुककर निगरानी रख लूँगा।"

"सोने का अब क्या फायदा?" मीश्का बोला। "दिन काफी निकल आया है।"

ज़रा-सी भी आवाज न करते हुए वह अपने कमरे में गया। अपने कपड़े ले आया और पहनने लगा। उसने पतलून और कमीज पहनी, जूते में फीते बाँधे, फिर सोफे पर लेट गया और तुरन्त नींद में खो गया। "मैं उसको नहीं जगाऊँगा," मैंने सोचा। "आखिर आदमी को कभी तो कुछ नींद मिलनी चाहिए।"

मैं इनक्युबेटर के पास बैठ गया और तापमापी की ओर सावधानी से देखने लगा। कुछ समय बाद खाली बैठे रहने से मैं ऊब गया। इसलिए मैंने *मुर्गी पालन* की किताब उठा ली और इनक्युबेटर के बारे में पढ़ने लगा। उसमें लिखा हुआ था कि अगर अण्डे एक ही स्थिति में रहें, तो खोल के भीतर भ्रूण के चिपक जाने की सम्भावना रहती है और ऐसी हालत में बच्चे कुरूप, दुबले-पतले और टेढ़े-मेढ़े या मरे हुए भी पैदा हो सकते हैं। भ्रूण खोल से चिपक न जाए, इसलिए अण्डों को हर तीन घण्टे के बाद पलट देना जरूरी है।

मैंने इनक्युबेटर को खोला और अण्डों को पलटना शुरू किया। उसी समय मीश्का जाग उठा। जब उसने देखा कि मैंने इनक्युबेटर खोल दिया है, तो वह चिल्लाते हुए उछल पड़ा–

"ऐं, क्या कर रहे हो!"

मैं इतना डर गया कि एक अण्डा मेरे हाथ से लगभग गिर ही पड़ा।

"कुछ नहीं," मैंने कहा

"कुछ नहीं, यानी? इनक्युबेटर क्यों खोला? मैंने कह जो रखा था कि हमें इक्कीस दिन ठहरना पड़ेगा। तुम्हारा क्या यह ख्याल है कि एक ही दिन में अण्डों में से चूज़े निकल आएँगे!"

"मेरा ऐसा कोई ख्याल नहीं है," मैंने कहा। मैंने उसको यह समझाने की कोशिश की कि अण्डों को हर तीन घण्टे के बाद पलट देना चाहिए, लेकिन उसने मेरी ओर ध्यान तक नहीं दिया और ऊँचे स्वर में चिल्लाता रहा-

"ढक्कन बन्द करो! मैं कह रहा हूँ, बन्द कर दो! आदमी मिनट भर को भी सो नहीं सकता। मैंने इधर ज़रा आँखें बन्द कीं और उधर तुमने इनक्युबेटर खोल दिया।"

"मुझे उसे खोलने की क्या जरूरत थी?" मैंने कहा।

उसने लपककर ढक्कन लगा दिया, लेकिन उस समय तक मैं सारे अण्डों को पलट चुका था।

मीश्का ने इतना हंगामा मचाया था कि उसके माता-पिता दौड़ते हुए आ गए।

"क्यों इतना चिल्ला रहे हो?" उन्होंने पूछा।

"इस गधे ने जाकर इनक्युबेटर खोल दिया," मीश्का बोला।

मैंने बताया कि अण्डों को पलटना जरूरी है, नहीं तो चूजे लूले-लंगड़े पैदा होंगे।

"किसने ऐसा कहा है?" मीश्का बोला। "मुर्गियाँ जब अण्डों को सेती हैं तो लूले-लंगड़े चूज़े क्यों नहीं पैदा होते?"

"जब मुर्गियाँ अण्डों को सेती हैं, तब वे हमेशा उनको पलटती रहती हैं," मीश्का की माँ ने कहा।

"भला मूर्ख मुर्गी कैसे समझ सकती है कि अण्डों को पलट देना चाहिए?" मीश्का ने पूछा।

"जितना तुम समझते हो वह उतनी मूर्ख नहीं होती," मीश्का की माँ ने उत्तर दिया।

क्षण भर मीश्का सोचता रहा।

"ओह, अब मुझे याद आया। मैंने ही उन्हें अण्डों को पलटते हुए देखा है," आखिर वह बोला। "मुझे हमेशा आश्चर्य होता था कि क्यों ये अपनी नाक से अण्डों को धकेलती रहती हैं।"

"रे बद्धू" वह बोलीं, "नाकवाली मुर्गी तूने कहाँ देखी?"

"मेरा मतलब चोंच से था। लेकिन वही तो मुर्गी की नाक भी है।"